International Journal of Advance and Applied Research
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2347-7075 | Impact Factor – 8.26 | *Website:* https://ijaar.co.in/
Volume-14, Issue-1 | September - October 2026

Original Article

प्राचीन भारतीय समाज में प्रचलित विभिन्न अलंकारों की परंपरा: एक ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक अध्ययन

डॉ. रवीन्द्र कुमार सिंह

प्रधानाचार्य,

सीनियर सेकेंडरी स्कूल पोगर, रफीगंज, औरंगाबाद (बिहार)

Manuscript ID:
IJAAR-140143

ISSN: 2347-7075
Impact Factor – 8.26

Volume – 14
Issue – 1
September- October 2026
Pp. 351 - 361

Submitted: 13 Oct 2026
Revised: 22 Oct 2026
Accepted: 25 Oct 2026
Published: 31 Oct 2026

Corresponding Author:
डॉ. रवीन्द्र कुमार सिंह

Quick Response Code:

Website: https://ijaar.co.in/

DOI:
10.5281/zenodo.24244599

DOI Link:
https://doi.org/10.5281/zenodo.24244599

Creative Commons

OPEN ACCESS

सारांश:

प्राचीन भारतीय समाज में अलंकारों की परंपरा केवल शारीरिक सौंदर्य एवं बाह्य शृंगार की अभिव्यक्ति तक सीमित नहीं रही, बल्कि यह भारतीय सभ्यता की ऐतिहासिक चेतना, सांस्कृतिक समृद्धि, सामाजिक संरचना और आर्थिक विकास का भी महत्त्वपूर्ण परिचायक रही है। प्राचीन काल से ही मनुष्य ने अपनी सौंदर्यबोधात्मक अभिरुचि, धार्मिक आस्था, सामाजिक प्रतिष्ठा तथा सांस्कृतिक पहचान को अभिव्यक्त करने के लिए विभिन्न प्रकार के अलंकारों का निर्माण और उपयोग किया। भारतीय इतिहास के विविध कालखंडों में अलंकारों के स्वरूप, निर्माण-कला, प्रयुक्त सामग्री तथा उपयोग की परंपराओं में निरंतर विकास और परिवर्तन दिखाई देता है। सिंधु-सरस्वती सभ्यता से प्राप्त पुरातात्त्विक अवशेषों, वैदिक साहित्य, रामायण, महाभारत, बौद्ध एवं जैन ग्रंथों, संस्कृत काव्य-साहित्य तथा प्राचीन भारतीय मूर्तिकला में अलंकारों की समृद्ध और विकसित परंपरा के विविध प्रमाण उपलब्ध होते हैं।

प्रस्तुत शोध-पत्र में प्राचीन भारतीय समाज में प्रचलित विभिन्न अलंकारों का ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक दृष्टिकोण से विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है। इसके अंतर्गत मस्तकाभूषण, कर्णाभूषण, हार, कंठहार, कुंडल, बाजूबंद, केयूर, कंगन, चूड़ी, मेखला, करधनी, नूपुर, पायल तथा मुद्रिका आदि प्रमुख आभूषणों के स्वरूप, निर्माण एवं उपयोग की परंपराओं का विवेचन किया गया है। साथ ही स्वर्ण, रजत, ताँबा, कांसा, मोती, मणि, रत्न, शंख, हाथीदाँत, मिट्टी एवं काँच जैसी विविध सामग्रियों के प्रयोग तथा आभूषण निर्माण में विकसित शिल्प-कौशल और तकनीकी दक्षता का भी अध्ययन किया गया है।

शोध के क्रम में यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि प्राचीन भारतीय समाज में अलंकार व्यक्ति की व्यक्तिगत अभिरुचि और सौंदर्य-चेतना के प्रतीक होने के साथ-साथ सामाजिक प्रतिष्ठा, आर्थिक संपन्नता, धार्मिक विश्वास, पारिवारिक परंपरा तथा सांस्कृतिक पहचान के महत्त्वपूर्ण माध्यम भी थे। इनके निर्माण एवं विनिमय ने धातु-विज्ञान, रत्न-शिल्प, हस्तकला और व्यापारिक गतिविधियों के विकास में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस प्रकार प्राचीन भारतीय अलंकार परंपरा का अध्ययन भारतीय समाज के ऐतिहासिक विकास, सांस्कृतिक विविधता, सामाजिक जीवन और कलात्मक उपलब्धियों को समझने की दृष्टि से

International Journal of Advance and Applied Research
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2347-7075 | Impact Factor – 8.26 | *Website:* https://ijaar.co.in/
Volume-14, Issue-1 | September - October 2026

अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। प्रस्तुत शोध इसी परंपरा के बहुआयामी स्वरूप को उद्घाटित करते हुए भारतीय सांस्कृतिक विरासत में अलंकारों के विशिष्ट स्थान को रेखांकित करता है।

प्रमुख शब्द : प्राचीन भारतीय समाज, अलंकार परंपरा, आभूषण, सिंधु सभ्यता, वैदिक संस्कृति, स्वर्णाभूषण, सामाजिक प्रतिष्ठा, सांस्कृतिक विरासत, धार्मिक प्रतीक, शिल्पकला।

Creative Commons (CC BY-NC-SA 4.0)
This is an open access journal, and articles are distributed under the terms of the Creative Commons Attribution-NonCommercial-ShareAlike 4.0 International License (CC BY-NC-SA 4.0), *which permits others to remix, adapt, and build upon the work non-commercially, provided that appropriate credit is given and that any new creations are licensed under identical terms.*

How to cite this article:
डॉ. रवीन्द्र कुमार सिंह (2026). प्राचीन भारतीय समाज में प्रचलित विभिन्न अलंकारों की परंपरा: एक ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक अध्ययन. International Journal of Advance and Applied Research, 14(1), 351 – 361. https://doi.org/10.5281/zenodo.24244599

प्रस्तावना:

भारतीय संस्कृति का इतिहास अत्यंत प्राचीन, व्यापक और बहुआयामी रहा है। यहाँ की सामाजिक एवं सांस्कृतिक परंपराओं में वस्त्र, भोजन, आवास, कला, संगीत, स्थापत्य और शृंगार का विशेष महत्त्व रहा है। इन्हीं परंपराओं में अलंकारों का स्थान उल्लेखनीय है। अलंकार मनुष्य की सौंदर्य-चेतना, कलात्मक अभिरुचि और सांस्कृतिक संवेदना की अभिव्यक्ति हैं। मनुष्य ने अपनी शारीरिक सुंदरता को आकर्षक बनाने, सामाजिक पहचान स्थापित करने तथा धार्मिक विश्वासों को अभिव्यक्त करने के लिए विभिन्न प्रकार के आभूषणों का निर्माण और उपयोग किया।

भारतीय समाज में आभूषणों की परंपरा केवल किसी एक काल अथवा वर्ग तक सीमित नहीं रही। इसके प्रमाण प्रागैतिहासिक स्थलों, सिंधु सभ्यता के पुरातात्त्विक अवशेषों, वैदिक साहित्य, महाकाव्यों, बौद्ध-जैन साहित्य और प्राचीन भारतीय मूर्तिकला में मिलते हैं। इन स्रोतों से ज्ञात होता है कि प्राचीन भारतीय स्त्री और पुरुष दोनों ही विभिन्न प्रकार के अलंकार धारण करते थे। अलंकारों का चयन व्यक्ति की आयु, आर्थिक स्थिति, सामाजिक भूमिका, अवसर और सांस्कृतिक परिवेश के अनुसार होता था।

अलंकारों का अध्ययन इतिहास की दृष्टि से इसलिए भी महत्त्वपूर्ण है कि इनके माध्यम से तत्कालीन समाज की आर्थिक समृद्धि, व्यापारिक संबंधों, धातु-विज्ञान, शिल्प-कौशल और सौंदर्य-बोध की जानकारी प्राप्त होती है। उदाहरण के लिए, सिंधु सभ्यता में मनके, शंख की चूड़ियाँ, धातु के आभूषण और अर्द्ध-मूल्यवान पत्थरों का प्रयोग विकसित शिल्प-परंपरा की ओर संकेत करता है। इसी प्रकार वैदिक साहित्य में स्वर्णाभूषणों के उल्लेख तत्कालीन धार्मिक और सामाजिक जीवन में आभूषणों की उपस्थिति को स्पष्ट करते हैं।

इस प्रकार प्राचीन भारतीय अलंकार परंपरा का अध्ययन केवल आभूषणों की सूची तैयार करना नहीं है, बल्कि भारतीय समाज के ऐतिहासिक विकास, सांस्कृतिक मूल्यों और सामाजिक संरचना को समझने का एक महत्त्वपूर्ण माध्यम है।

International Journal of Advance and Applied Research
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2347-7075 | Impact Factor – 8.26 | *Website:* https://ijaar.co.in/
Volume-14, Issue-1 | September - October 2026

शोध समस्या का प्रतिपादन:

प्राचीन भारतीय समाज में अलंकारों के उपयोग को सामान्यतः सौंदर्य और शृंगार से जोड़कर देखा जाता है। किंतु उनका महत्त्व इससे कहीं अधिक व्यापक था। आभूषण व्यक्ति की सामाजिक स्थिति, संपन्नता, धार्मिक विश्वास, वैवाहिक स्थिति और सांस्कृतिक पहचान को भी व्यक्त करते थे। विभिन्न ऐतिहासिक कालखंडों में उनके स्वरूप और उपयोग में परिवर्तन हुआ।

इस शोध की मूल समस्या यह समझना है कि प्राचीन भारतीय समाज में प्रचलित अलंकारों का विकास किन ऐतिहासिक परिस्थितियों में हुआ तथा उनका सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और आर्थिक जीवन से किस प्रकार संबंध स्थापित हुआ।

1. प्राचीन भारतीय समाज में अलंकारों की उत्पत्ति एवं विकास का ऐतिहासिक अध्ययन करना।
2. सिंधु सभ्यता, वैदिक काल और उत्तरवैदिक काल में प्रचलित आभूषणों की परंपरा का विवेचन करना।
3. प्राचीन भारत में प्रचलित प्रमुख अलंकारों के प्रकार, स्वरूप और उपयोग को स्पष्ट करना।
4. आभूषण निर्माण में प्रयुक्त धातुओं, रत्नों और अन्य सामग्रियों का अध्ययन करना।
5. अलंकारों के सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक महत्त्व का विश्लेषण करना।
6. प्राचीन भारतीय कला, साहित्य और मूर्तिकला में अलंकारों की उपस्थिति का अध्ययन करना।
7. भारतीय अलंकार परंपरा की निरंतरता और आधुनिक समाज में उसकी प्रासंगिकता को समझना।

शोध-पद्धति:

प्रस्तुत शोध-पत्र में ऐतिहासिक, वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक एवं तुलनात्मक शोध-पद्धतियों का उपयोग किया गया है। अध्ययन के लिए प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों को आधार बनाया गया है। प्राथमिक स्रोतों में वैदिक साहित्य, रामायण, महाभारत, कौटिल्य का अर्थशास्त्र तथा प्राचीन भारतीय मूर्तिकला और पुरातात्त्विक अवशेषों को सम्मिलित किया गया है। द्वितीयक स्रोतों में भारतीय इतिहास, पुरातत्त्व, कला एवं संस्कृति से संबंधित पुस्तकों और शोध-पत्रों का अध्ययन किया गया है।

इस शोध में साहित्यिक प्रमाणों की तुलना पुरातात्त्विक साक्ष्यों से करते हुए अलंकारों की ऐतिहासिक भूमिका को समझने का प्रयास किया गया है। विशेष रूप से सिंधु सभ्यता के आभूषणों के अध्ययन में जे. एम. केनॉयर के शोध का उपयोग किया गया है। साहित्यिक उल्लेखों को उनके ऐतिहासिक संदर्भ में समझने का प्रयास किया गया है, क्योंकि किसी ग्रंथ में वर्णित आभूषण का उल्लेख अपने आप में उसके व्यापक सामाजिक उपयोग का पूर्ण प्रमाण नहीं माना जा सकता।

प्राचीन भारतीय अलंकार परंपरा का ऐतिहासिक विकास:

प्रागैतिहासिक काल में अलंकारों की परंपरा:

अलंकारों की परंपरा का प्रारंभ मानव की प्रारंभिक सौंदर्य-चेतना और प्रकृति के साथ उसके संबंधों से जुड़ा हुआ माना जा सकता है। प्रारंभिक मानव प्राकृतिक वस्तुओं जैसे बीज, फल, रंगीन पत्थर, हड्डी, दाँत, शंख और सीप आदि का उपयोग शरीर को सजाने के लिए करता रहा होगा। इन वस्तुओं का प्रयोग केवल

International Journal of Advance and Applied Research
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2347-7075 | Impact Factor – 8.26 | *Website:* https://ijaar.co.in/
Volume-14, Issue-1 | September - October 2026

शारीरिक सजावट के लिए ही नहीं, बल्कि संभवतः पहचान, समूह-संबंध और धार्मिक विश्वासों से भी जुड़ा रहा होगा।

प्रागैतिहासिक स्थलों से प्राप्त मनके, पत्थर के लटकन और अन्य सजावटी वस्तुएँ इस बात का संकेत देती हैं कि मनुष्य में अलंकरण की प्रवृत्ति अत्यंत प्राचीन है। धीरे-धीरे इन प्राकृतिक वस्तुओं को आकार देने, छेद करने, चमकाने और धागों में पिरोने की तकनीक विकसित हुई। इससे आभूषण निर्माण की प्रारंभिक परंपरा का विकास हुआ।

सिंधु-सरस्वती सभ्यता में अलंकारों का विकास:

सिंधु-सरस्वती सभ्यता प्राचीन भारतीय अलंकार परंपरा के अध्ययन का एक महत्त्वपूर्ण आधार है। हड़प्पा, मोहनजोदड़ो, लोथल और चन्हूदड़ो जैसे स्थलों से प्राप्त आभूषण इस बात के प्रमाण हैं कि उस समय आभूषण निर्माण एक विकसित शिल्प के रूप में विद्यमान था।

इस सभ्यता के लोग सोना, चाँदी, ताँबा, शंख, मिट्टी, फैयेंस तथा कार्नेलियन, अगेट, जैस्पर और अन्य अर्द्ध-मूल्यवान पत्थरों से आभूषण बनाते थे। मनके बनाने की तकनीक विशेष रूप से विकसित थी। मनकों को काटने, घिसने, चमकाने और उनमें छेद करने की प्रक्रियाओं में कुशलता दिखाई देती है। लोथल और चन्हूदड़ो जैसे स्थलों से मनका निर्माण से संबंधित पुरातात्त्विक प्रमाण प्राप्त हुए हैं।

इस काल में हार, मनके, कंगन, बाजूबंद, अंगूठियाँ, कान के आभूषण, कमरबंध और सिर के आभूषणों का प्रयोग होता था। स्त्री और पुरुष दोनों के आभूषण धारण करने के प्रमाण मिलते हैं। मोहनजोदड़ो से प्राप्त प्रसिद्ध नर्तकी की कांस्य प्रतिमा में एक हाथ पर अनेक चूड़ियों का अंकन विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यह प्रतिमा तत्कालीन शृंगार-बोध और कलात्मक अभिव्यक्ति की ओर संकेत करती है।

सिंधु सभ्यता के आभूषणों का अध्ययन यह भी बताता है कि आभूषणों का निर्माण केवल व्यक्तिगत उपयोग के लिए नहीं होता था, बल्कि उनके उत्पादन और वितरण से शिल्पकारों, व्यापारियों तथा विभिन्न क्षेत्रों के बीच आर्थिक संबंध भी विकसित हुए थे। केनॉयर के अनुसार, हड़प्पा सभ्यता में आभूषणों की शैलियों, निर्माण तकनीकों और प्रयुक्त सामग्रियों का अध्ययन तत्कालीन सामाजिक एवं आर्थिक संगठन को समझने में सहायता करता है।[1]

वैदिक काल में अलंकारों की परंपरा:

वैदिक साहित्य में स्वर्ण, मणि, निष्क और विभिन्न प्रकार के आभूषणों के उल्लेख प्राप्त होते हैं। ऋग्वेद तथा अथर्ववेद में स्वर्णाभूषणों और शरीर पर धारण की जाने वाली सजावटी वस्तुओं का वर्णन मिलता है। वैदिक समाज में सोने को मूल्यवान धातु के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त थी। इसका प्रयोग धार्मिक अनुष्ठानों, उपहारों और व्यक्तिगत शृंगार में किया जाता था।

अथर्ववेद में कर्णाभूषण, स्वर्ण ताबीज तथा अन्य सजावटी वस्तुओं के उल्लेख मिलते हैं। वैदिक साहित्य में 'निष्क' शब्द का प्रयोग विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है। इसका संबंध स्वर्ण से बने मूल्यवान आभूषण अथवा स्वर्ण-खंड से था। इसके अर्थ और उपयोग में समय तथा संदर्भ के अनुसार भिन्नता हो सकती है।

वैदिक काल में आभूषणों का धार्मिक महत्त्व भी था। यज्ञ, विवाह और अन्य संस्कारों में स्वर्ण तथा अन्य मूल्यवान वस्तुओं का प्रयोग शुभता, समृद्धि और मंगल

International Journal of Advance and Applied Research
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2347-7075 | Impact Factor – 8.26 | *Website:* https://ijaar.co.in/
Volume-14, Issue-1 | September - October 2026

का प्रतीक माना जाता था। इस प्रकार आभूषण व्यक्तिगत शृंगार के साथ धार्मिक एवं सांस्कृतिक जीवन से भी जुड़े हुए थे।

रामायण और महाभारत काल में अलंकारों का स्वरूप:

रामायण और महाभारत में विभिन्न प्रकार के आभूषणों का विस्तृत उल्लेख मिलता है। इन महाकाव्यों में राजपरिवारों, योद्धाओं, स्त्रियों और देव-चरित्रों के शृंगार-वर्णन के माध्यम से तत्कालीन अलंकार परंपरा का परिचय प्राप्त होता है।

रामायण में सीता के आभूषणों, राम के राजसी परिधान तथा अन्य पात्रों के शृंगार का वर्णन मिलता है। कर्णाभूषण, हार, बाजूबंद, मुद्रिका और नूपुर जैसे आभूषणों का उल्लेख कथानक में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सीता द्वारा आभूषणों को पहचान के संकेत के रूप में प्रस्तुत करना इस बात का उदाहरण है कि आभूषण व्यक्तिगत पहचान और स्मृति से भी जुड़े हुए थे।

महाभारत में राजसी शृंगार, मुकुट, कुण्डल, हार, बाजूबंद तथा अन्य आभूषणों का उल्लेख मिलता है। कर्ण के कुण्डल और कवच का प्रसंग विशेष रूप से प्रसिद्ध है। इससे आभूषणों का धार्मिक, पौराणिक और प्रतीकात्मक महत्त्व स्पष्ट होता है।

इन महाकाव्यों में वर्णित आभूषणों को तत्कालीन जीवन का प्रत्यक्ष पुरातात्त्विक प्रमाण नहीं माना जा सकता, फिर भी वे भारतीय समाज की शृंगार संबंधी कल्पनाओं, आदर्शों और सांस्कृतिक धारणाओं को समझने में महत्त्वपूर्ण साहित्यिक स्रोत हैं।

मौर्य, शुंग और कुषाण काल में अलंकारों का विकास:

मौर्य काल में भारतीय कला, शिल्प और व्यापार का उल्लेखनीय विकास हुआ। इस काल में मूर्तिकला, यक्ष-यक्षिणी प्रतिमाओं तथा अन्य कलात्मक अवशेषों में अलंकारों के विविध रूप दिखाई देते हैं। स्त्री प्रतिमाओं में हार, कर्णाभूषण, करधनी, कंगन और अन्य आभूषणों का अंकन मिलता है।

शुंग काल की मूर्तिकला और स्तूप-सज्जा में भी अलंकरण की समृद्ध परंपरा दिखाई देती है। भरहुत और साँची के स्तूपों पर उत्कीर्ण स्त्री-पुरुष आकृतियों में आभूषणों का विस्तृत चित्रण तत्कालीन शृंगार-रुचि का परिचय देता है।

कुषाण काल में व्यापारिक गतिविधियों के विस्तार के साथ रत्नों, धातुओं और मनकों के उपयोग में विविधता आई। गांधार और मथुरा कला की मूर्तियों में हार, मुकुट, कुण्डल तथा अन्य आभूषणों का अंकन मिलता है। इस काल में भारतीय कला पर विभिन्न सांस्कृतिक संपर्कों का प्रभाव भी दिखाई देता है।

गुप्त काल में अलंकारों की कलात्मक परंपरा:

गुप्त काल को भारतीय कला और संस्कृति के विकास का महत्त्वपूर्ण चरण माना जाता है। इस काल की मूर्तिकला में सौंदर्य, संतुलन, लावण्य और अलंकरण का विशिष्ट समन्वय दिखाई देता है। देवी-देवताओं की प्रतिमाओं में मुकुट, हार, कर्णकुण्डल, बाजूबंद, कंगन, मेखला और नूपुर जैसे आभूषणों का सुंदर अंकन मिलता है।

इस काल में आभूषण केवल धन और प्रतिष्ठा के प्रतीक नहीं थे, बल्कि वे कलात्मक अभिव्यक्ति के भी

International Journal of Advance and Applied Research
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2347-7075 | Impact Factor – 8.26 | *Website:* https://ijaar.co.in/
Volume-14, Issue-1 | September - October 2026

महत्त्वपूर्ण माध्यम बन गए थे। संस्कृत साहित्य में भी शृंगार और आभूषणों का वर्णन मिलता है। कालिदास के काव्य में स्त्री-सौंदर्य, वस्त्र और आभूषणों के माध्यम से प्रकृति तथा मानवीय भावनाओं का कलात्मक चित्रण किया गया है।

प्राचीन भारतीय समाज में प्रचलित प्रमुख अलंकार:

प्राचीन भारत में शरीर के विभिन्न अंगों के अनुसार अनेक प्रकार के आभूषण प्रचलित थे। इनका स्वरूप क्षेत्र, काल, सामाजिक स्थिति और उपलब्ध सामग्री के अनुसार अलग-अलग हो सकता था।

मस्तक एवं सिर के आभूषण: सिर और मस्तक को सजाने के लिए मुकुट, किरीट, चूड़ामणि, मस्तकपट्ट, मांगपट्टी और शिरोभूषण जैसे आभूषणों का प्रयोग होता था। मुकुट विशेष रूप से राजा, देवता और उच्च प्रतिष्ठा वाले व्यक्तियों से संबंधित था। चूड़ामणि तथा अन्य मस्तकाभूषण स्त्रियों के शृंगार में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते थे।

कर्णाभूषण: कानों को सजाने के लिए कुंडल, कर्णफूल, कर्णिका, कर्णवलय और विभिन्न प्रकार के लटकन प्रचलित थे। स्वर्ण, रजत, रत्न तथा अन्य सामग्रियों से इनका निर्माण किया जाता था। साहित्य और मूर्तिकला में देवी-देवताओं तथा स्त्री-पुरुष आकृतियों के कानों में विविध प्रकार के आभूषणों का चित्रण मिलता है।

गले के आभूषण: गले में हार, माला, कंठहार, मुक्ताहार, रत्नहार और निष्क जैसे आभूषण धारण किए जाते थे। इनका निर्माण सोने, चाँदी, मोती, मणियों और रंगीन पत्थरों से होता था। हार व्यक्ति की आर्थिक स्थिति और सौंदर्य-बोध को व्यक्त करने का एक महत्त्वपूर्ण माध्यम था।

हाथ और भुजाओं के आभूषण: हाथों तथा भुजाओं में बाजूबंद, केयूर, कंगन, चूड़ी, वलय और अंगूठी जैसे आभूषण पहने जाते थे। चूड़ियाँ स्त्री-शृंगार का विशेष अंग थीं, जबकि बाजूबंद और केयूर का प्रयोग स्त्री तथा पुरुष दोनों के संदर्भों में मिलता है। अंगूठियों में कभी-कभी रत्न जड़े होते थे, जो उनकी कलात्मकता और मूल्य को बढ़ाते थे।

कमर के आभूषण: कमर को सजाने के लिए मेखला, करधनी और कटिसूत्र जैसे आभूषणों का प्रयोग होता था। मूर्तिकला में स्त्री आकृतियों की कमर पर अलंकृत मेखला का चित्रण विशेष रूप से मिलता है। इन आभूषणों का उपयोग वस्त्रों को व्यवस्थित रखने और शारीरिक सौंदर्य को उभारने के लिए भी किया जाता था।

पैरों के आभूषण: पैरों में नूपुर, पायल, पादवलय और बिछिया जैसे आभूषण प्रचलित थे। नूपुर में छोटी-छोटी घंटियाँ लगी होती थीं, जिनसे चलने पर मधुर ध्वनि उत्पन्न होती थी। साहित्य में नूपुर की ध्वनि को स्त्री-सौंदर्य और शृंगार के साथ जोड़ा गया है। बिछिया का प्रयोग विभिन्न क्षेत्रों में वैवाहिक एवं सांस्कृतिक परंपराओं से भी जुड़ा रहा है; हालांकि इसके प्रचलन और अर्थ को सभी प्राचीन कालखंडों में एक समान नहीं माना जा सकता।

अलंकार निर्माण में प्रयुक्त सामग्री एवं तकनीक:

प्राचीन भारतीय अलंकार परंपरा की विशेषता उसकी सामग्रीगत विविधता और निर्माण-कौशल में निहित है। आभूषणों के निर्माण में निम्नलिखित सामग्रियों का प्रयोग होता था—

International Journal of Advance and Applied Research
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2347-7075 | Impact Factor – 8.26 | *Website:* https://ijaar.co.in/
Volume-14, Issue-1 | September - October 2026

स्वर्ण: सोना मूल्यवान धातु होने के कारण राजपरिवारों, संपन्न वर्गों और धार्मिक अनुष्ठानों में विशेष महत्त्व रखता था।

रजत: चाँदी का उपयोग हार, कंगन, पायल और अन्य आभूषणों में किया जाता था।

ताँबा और कांसा: इन धातुओं से विभिन्न प्रकार के कंगन, वलय और सजावटी वस्तुएँ बनाई जाती थीं।

रत्न एवं अर्द्ध-मूल्यवान पत्थर: कार्नेलियन, अगेट, जैस्पर, लाजवर्द, स्फटिक और अन्य पत्थरों का उपयोग मनके, हार तथा लटकन बनाने में होता था।

शंख और सीप: शंख की चूड़ियाँ तथा सीप से बने आभूषण विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

मिट्टी, फैयेंस और काँच: इन सामग्रियों से रंगीन मनके, लटकन और अन्य सजावटी वस्तुएँ बनाई जाती थीं।

आभूषण निर्माण में धातु को पीटकर आकार देना, ढलाई करना, तार बनाना, नक्काशी करना, रत्न जड़ना, मनकों में छेद करना तथा सतह को चमकाना जैसी तकनीकों का प्रयोग किया जाता था। इन तकनीकों से स्पष्ट होता है कि प्राचीन भारतीय शिल्पकारों को धातु और अन्य सामग्रियों के गुणों का व्यावहारिक ज्ञान था।

अलंकारों का सामाजिक महत्त्व:

प्राचीन भारतीय समाज में आभूषण सामाजिक पहचान और प्रतिष्ठा के महत्त्वपूर्ण संकेतक थे। व्यक्ति द्वारा धारण किए जाने वाले आभूषणों की सामग्री, संख्या, बनावट और गुणवत्ता से उसकी आर्थिक स्थिति का अनुमान लगाया जा सकता था। स्वर्ण तथा रत्नों से निर्मित आभूषण सामान्यतः अधिक मूल्यवान माने जाते थे, जबकि मिट्टी, शंख, काँच और साधारण धातुओं से बने आभूषण अपेक्षाकृत सुलभ थे।

आभूषणों के माध्यम से सामाजिक वर्गों के बीच आर्थिक अंतर भी अभिव्यक्त होता था। राजपरिवारों और संपन्न वर्गों के आभूषणों में बहुमूल्य धातुओं तथा रत्नों का प्रयोग अधिक होता था, जबकि सामान्य जनजीवन में स्थानीय रूप से उपलब्ध सामग्रियों से बने आभूषण प्रचलित थे।

हालाँकि यह मानना उचित नहीं होगा कि किसी विशेष प्रकार का आभूषण केवल एक ही सामाजिक वर्ग तक सीमित था। पुरातात्त्विक साक्ष्य बताते हैं कि सिंधु सभ्यता में अनेक प्रकार के मनके और आभूषण विभिन्न सामाजिक संदर्भों में उपलब्ध थे। इसलिए आभूषणों के आधार पर सामाजिक विभाजन का अध्ययन सावधानीपूर्वक करना आवश्यक है।

अलंकारों का धार्मिक एवं आध्यात्मिक महत्त्व:

भारतीय धार्मिक परंपरा में आभूषणों को शुभता, समृद्धि, मंगल और पवित्रता से जोड़ा गया है। देवी-देवताओं की मूर्तियों में मुकुट, हार, कुण्डल, बाजूबंद और अन्य आभूषणों का अंकन उनकी दिव्यता तथा महिमा को व्यक्त करता है।

स्वर्ण को पवित्र और शुभ धातु के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त थी। धार्मिक अनुष्ठानों में स्वर्णाभूषण और अन्य मूल्यवान वस्तुएँ दान तथा उपहार के रूप में प्रयुक्त होती थीं। विभिन्न धार्मिक परंपराओं में आभूषणों का प्रयोग अलग-अलग प्रतीकात्मक अर्थों में भी हुआ।

बौद्ध कला में बुद्ध, बोधिसत्त्व तथा अन्य पात्रों के चित्रण में आभूषणों का प्रयोग विशेष रूप से

International Journal of Advance and Applied Research
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2347-7075 | Impact Factor – 8.26 | *Website:* https://ijaar.co.in/
Volume-14, Issue-1 | September - October 2026

उल्लेखनीय है। बोधिसत्त्व प्रतिमाओं में मुकुट, हार और कर्णाभूषण राजसी वैभव तथा आध्यात्मिक महिमा के प्रतीक के रूप में दिखाई देते हैं। इसके विपरीत बुद्ध की सामान्य प्रतिमाओं में प्रायः सादगी और संयम का भाव प्रमुख होता है। इस अंतर से स्पष्ट होता है कि आभूषणों का धार्मिक अर्थ प्रत्येक परंपरा और प्रतिमा के स्वरूप के अनुसार बदल सकता था।

अलंकारों का आर्थिक महत्त्व:

प्राचीन भारत में आभूषण निर्माण एक महत्त्वपूर्ण आर्थिक गतिविधि थी। स्वर्णकार, रत्नकार, मनका निर्माता, शंख-शिल्पी और अन्य कारीगर इस क्षेत्र से जुड़े हुए थे। आभूषणों की माँग ने विभिन्न शिल्पों के विकास को प्रोत्साहित किया।

आभूषण निर्माण के लिए आवश्यक धातुओं, रत्नों और अन्य सामग्रियों की प्राप्ति ने व्यापारिक संबंधों को बढ़ावा दिया। कुछ वस्तुएँ स्थानीय स्तर पर उपलब्ध थीं, जबकि कुछ सामग्रियों के लिए दूरस्थ क्षेत्रों से संपर्क स्थापित करना पड़ता था। इससे व्यापारिक मार्गों और शिल्प-केंद्रों के विकास में सहायता मिली।

कौटिल्य के अर्थशास्त्र में स्वर्ण से संबंधित कार्यों, धातु-शोधन और स्वर्णकारों के नियमन के लिए प्रशासनिक व्यवस्था का उल्लेख मिलता है। इससे पता चलता है कि मूल्यवान धातुओं और उनसे निर्मित वस्तुओं का आर्थिक तथा प्रशासनिक महत्त्व था।[2]

साहित्य, कला एवं मूर्तिकला में अलंकारों की अभिव्यक्ति:

भारतीय साहित्य में अलंकारों का वर्णन केवल शारीरिक सजावट तक सीमित नहीं है। संस्कृत महाकाव्यों, नाटकों और काव्य-ग्रंथों में आभूषणों के माध्यम से पात्रों की सामाजिक स्थिति, मनोभाव, सौंदर्य और जीवन-परिस्थितियों को व्यक्त किया गया है।

रामायण और महाभारत में विभिन्न पात्रों के आभूषणों का उल्लेख कथानक और चरित्र-चित्रण को प्रभावशाली बनाता है। कालिदास के काव्य में नायिका के शृंगार और आभूषणों का वर्णन सौंदर्य तथा भावनात्मक अभिव्यक्ति के साथ जुड़ा हुआ है। बाणभट्ट की साहित्यिक रचनाओं में भी तत्कालीन राजसी जीवन और शृंगार-सामग्री के विविध संकेत मिलते हैं।

प्राचीन भारतीय मूर्तिकला में अलंकारों का विशेष महत्त्व है। साँची, भरहुत, मथुरा, अमरावती तथा अन्य कला-केंद्रों की मूर्तियों में हार, कुण्डल, मेखला, बाजूबंद और नूपुर का अंकन मिलता है। इन कलाकृतियों के माध्यम से तत्कालीन वस्त्राभूषण, शिल्प-कौशल और सौंदर्य-बोध को समझा जा सकता है।

इस प्रकार साहित्य और कला दोनों ही अलंकार परंपरा के अध्ययन के महत्त्वपूर्ण स्रोत हैं। साहित्य जहाँ आभूषणों के सांस्कृतिक और भावात्मक अर्थों को व्यक्त करता है, वहीं मूर्तिकला उनके दृश्य स्वरूप और कलात्मक विन्यास का परिचय देती है।

स्त्री-जीवन और अलंकार परंपरा:

प्राचीन भारतीय समाज में स्त्री-शृंगार का अलंकारों से घनिष्ठ संबंध था। हार, कुंडल, चूड़ी, करधनी,

International Journal of Advance and Applied Research
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2347-7075 | Impact Factor – 8.26 | *Website:* https://ijaar.co.in/
Volume-14, Issue-1 | September - October 2026

नूपुर, केशाभूषण और अन्य आभूषण स्त्रियों के शृंगार का महत्त्वपूर्ण अंग थे। विवाह, उत्सव, धार्मिक अनुष्ठान और सामाजिक समारोहों में आभूषणों का विशेष उपयोग होता था।

आभूषणों का संबंध स्त्री की आर्थिक सुरक्षा और पारिवारिक संपत्ति से भी जुड़ा रहा। कई समाजों में मूल्यवान आभूषण परिवार की संपत्ति के रूप में सुरक्षित रखे जाते थे और आवश्यकता पड़ने पर उनका आर्थिक उपयोग किया जा सकता था। हालांकि इस व्यवस्था का स्वरूप क्षेत्र, काल और सामाजिक वर्ग के अनुसार अलग-अलग था।

यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि स्त्री-शृंगार को केवल बाहरी सौंदर्य तक सीमित करके नहीं देखा जाना चाहिए। आभूषण स्त्रियों की व्यक्तिगत अभिरुचि, सांस्कृतिक पहचान और पारिवारिक परंपराओं के भी वाहक रहे हैं। साथ ही, विभिन्न कालों में स्त्री के आभूषणों से जुड़ी सामाजिक अपेक्षाएँ और मान्यताएँ भी बदलती रही हैं।

क्षेत्रीय विविधता और सांस्कृतिक निरंतरता:

भारत की भौगोलिक और सांस्कृतिक विविधता ने अलंकार परंपरा को बहुरंगी स्वरूप प्रदान किया। विभिन्न क्षेत्रों में स्थानीय संसाधनों, धार्मिक मान्यताओं और शिल्प परंपराओं के अनुसार आभूषणों की बनावट और शैली में अंतर दिखाई देता है।

उत्तर भारत में स्वर्ण, रजत और रत्नों से निर्मित आभूषणों की परंपरा विकसित हुई। पश्चिमी भारत में मनका निर्माण, धातु-शिल्प और शंख से संबंधित परंपराएँ महत्त्वपूर्ण रहीं। दक्षिण भारत में स्वर्णाभूषणों तथा मंदिरों से संबंधित आभूषण परंपरा का विशेष विकास हुआ। पूर्वी भारत में धातु, शंख, मिट्टी और अन्य स्थानीय सामग्रियों से निर्मित आभूषणों की विविधता दिखाई देती है।

इन परंपराओं को प्राचीन काल से आधुनिक काल तक बिना किसी परिवर्तन के चली आई एक समान व्यवस्था नहीं माना जा सकता। समय के साथ आभूषणों की बनावट, उपयोग और सामाजिक अर्थों में परिवर्तन हुआ है। फिर भी कुछ शिल्प तकनीकों, सौंदर्य-रुचियों और प्रतीकात्मक रूपों में सांस्कृतिक निरंतरता के संकेत मिलते हैं।

आधुनिक भारतीय समाज में प्राचीन अलंकार परंपरा की प्रासंगिकता: आधुनिक भारत में भी प्राचीन अलंकार परंपरा का प्रभाव विभिन्न रूपों में दिखाई देता है। विवाह, धार्मिक उत्सव, पारिवारिक समारोह और सांस्कृतिक आयोजनों में अनेक पारंपरिक आभूषणों का उपयोग किया जाता है। हार, कंगन, पायल, नथ, बाजूबंद, करधनी और मांगटीका जैसे आभूषण भारतीय शृंगार परंपरा के महत्त्वपूर्ण अंग बने हुए हैं।

आधुनिक आभूषण उद्योग में पारंपरिक शिल्प और नई तकनीकों का समन्वय दिखाई देता है। प्राचीन भारतीय डिजाइनों से प्रेरित आभूषण आज भी निर्मित किए जाते हैं। संग्रहालयों में संरक्षित पुरातात्त्विक आभूषण भारतीय इतिहास और शिल्पकला के अध्ययन के महत्त्वपूर्ण साधन हैं।

इस दृष्टि से प्राचीन अलंकार परंपरा का संरक्षण केवल कला और सौंदर्य की रक्षा नहीं है, बल्कि यह भारतीय सांस्कृतिक विरासत, पारंपरिक शिल्पकारों के ज्ञान और ऐतिहासिक स्मृति को सुरक्षित रखने का भी प्रयास है।

International Journal of Advance and Applied Research
Peer Reviewed | International Open Access Journal
ISSN: 2347-7075 | Impact Factor – 8.26 | *Website:* https://ijaar.co.in/
Volume-14, Issue-1 | September - October 2026

प्रमुख निष्कर्ष:

प्रस्तुत अध्ययन के आधार पर निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त होते हैं—

1. प्राचीन भारतीय समाज में अलंकारों की परंपरा अत्यंत प्राचीन थी। इसके प्रमाण पुरातात्त्विक अवशेषों और साहित्यिक स्रोतों दोनों में उपलब्ध हैं।
2. सिंधु सभ्यता में आभूषण निर्माण की तकनीक विकसित थी। मनके, शंख की चूड़ियाँ, धातु के आभूषण और अर्द्ध-मूल्यवान पत्थरों का प्रयोग इसका प्रमाण है।
3. वैदिक साहित्य में स्वर्णाभूषणों तथा अन्य सजावटी वस्तुओं का उल्लेख मिलता है, जिससे धार्मिक और सामाजिक जीवन में उनके महत्त्व का पता चलता है।
4. रामायण, महाभारत तथा संस्कृत साहित्य में आभूषणों का वर्णन सामाजिक प्रतिष्ठा, शृंगार और सांस्कृतिक आदर्शों से संबंधित है।
5. अलंकारों के निर्माण में सोना, चाँदी, ताँबा, कांसा, शंख, मिट्टी, काँच, मोती और रत्नों जैसी विविध सामग्रियों का उपयोग किया जाता था।
6. आभूषण सामाजिक प्रतिष्ठा, आर्थिक स्थिति और सांस्कृतिक पहचान के प्रतीक थे, किंतु उनके उपयोग को किसी एक सामाजिक वर्ग तक सीमित नहीं किया जा सकता।
7. अलंकार निर्माण से संबंधित शिल्प और व्यापारिक गतिविधियों ने प्राचीन भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।
8. साहित्य, मूर्तिकला और पुरातात्त्विक अवशेष अलंकार परंपरा के अध्ययन के परस्पर पूरक स्रोत हैं।
9. आधुनिक भारतीय समाज में भी प्राचीन आभूषण परंपरा के अनेक रूप सांस्कृतिक विरासत के रूप में विद्यमान हैं।

उपसंहार:

प्राचीन भारतीय समाज में अलंकारों की परंपरा भारतीय सभ्यता की समृद्ध सांस्कृतिक चेतना, कलात्मक अभिरुचि और सामाजिक संरचना का महत्त्वपूर्ण परिचायक है। प्रारंभिक प्राकृतिक वस्तुओं से निर्मित सजावटी सामग्री से लेकर सिंधु सभ्यता के विकसित मनका-शिल्प और वैदिक साहित्य में वर्णित स्वर्णाभूषणों तक इस परंपरा का क्रमिक विकास दिखाई देता है। मौर्य, शुंग, कुषाण और गुप्त काल में कला तथा मूर्तिकला के विकास ने अलंकारों को और अधिक विविध एवं कलात्मक स्वरूप प्रदान किया।

इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि आभूषण केवल शरीर को सजाने की वस्तुएँ नहीं थे। वे व्यक्ति की सामाजिक पहचान, आर्थिक स्थिति, धार्मिक आस्था, पारिवारिक परंपरा और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति से जुड़े हुए थे। इनके निर्माण में प्रयुक्त विविध धातुएँ, रत्न और शिल्प तकनीकें प्राचीन भारत के तकनीकी ज्ञान तथा व्यापारिक गतिविधियों का भी परिचय देती हैं।

अलंकारों के ऐतिहासिक अध्ययन से यह भी ज्ञात होता है कि भारतीय समाज में सौंदर्य-बोध और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति की परंपरा निरंतर विकसित होती रही। साहित्यिक ग्रंथों में वर्णित आभूषण जहाँ तत्कालीन

समाज की कल्पनाओं और आदर्शों को व्यक्त करते हैं, वहीं पुरातात्त्विक अवशेष उनके वास्तविक उपयोग और निर्माण-कौशल की जानकारी प्रदान करते हैं। इसलिए इन दोनों प्रकार के स्रोतों का तुलनात्मक अध्ययन आवश्यक है।

अंततः कहा जा सकता है कि प्राचीन भारतीय अलंकार परंपरा भारतीय इतिहास, संस्कृति, कला और सामाजिक जीवन का अभिन्न अंग रही है। इसका अध्ययन न केवल अतीत की जीवनशैली को समझने में सहायक है, बल्कि वर्तमान पीढ़ी को अपनी सांस्कृतिक विरासत और पारंपरिक शिल्प-कौशल के महत्त्व से भी परिचित कराता है।

संदर्भ-ग्रंथ सूची :

1. अथर्ववेद, सायणाचार्य भाष्य सहित, सम्पादित संस्करण, चौखम्बा संस्कृत सीरीज कार्यालय, वाराणसी।
2. कौटिल्य, कौटिलीय अर्थशास्त्र, सम्पादक एवं अनुवादक आर. पी. कांगले, महाराष्ट्र राज्य साहित्य एवं संस्कृति मंडल, मुंबई, 1960।
3. वाल्मीकि, श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण, गीता प्रेस, गोरखपुर।
4. वेदव्यास, श्रीमद्भारत (महाभारत), गीता प्रेस, गोरखपुर।
5. कालिदास, अभिज्ञानशाकुन्तलम्, चौखम्बा संस्कृत सीरीज कार्यालय, वाराणसी।
6. बाणभट्ट, हर्षचरितम्, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली।
7. वात्स्यायन, कामसूत्रम्, हिन्दी अनुवाद सहित, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, वाराणसी।